समय आ गया है मायूसी की धुंध मिटाने का

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

पिछले लगभग दो सालों से भारतीय विज्ञान, टेक्नॉलॉजी, कृषि और चिकित्सा (Science, Technology, Agriculture and Medicine - STEAM) की दुनिया में मायूसी छाई हुई है। और इसका सम्बंध इस बात से नहीं है कि सरकार किसकी है। पहले पुरानी सरकार ने हर क्षेत्र में स्वीकृत बजट में 30 प्रतिशत की आम कटौती की थी। इसके चलते कई प्रोजेक्टस को अंतिम समय में छोड़ दिया गया और चलते हुए प्रोजेक्टस में देरी हुई। वर्तमान सरकार ने बजट में न तो पुरानी कटौती की क्षतिपूर्ति की है और न ही कुछ जोड़ा है। आसार हैं कि कोई ज़्यादा सुधार नहीं होने वाला है। कुछ दशकों पहले हमने सुना था कि STEAM के बजट में क्रमिक ढंग से वृद्धि होगी - जीडीपी के तत्कालीन 0.8 प्रतिशत से बढ़ाकर 2 प्रतिशत करने की बात थी। हां, यह लगभग 1 प्रतिशत तक पहुंचा था लेकिन जल्द ही धराशायी होकर वास्तविक मूल्यों के आधार पर पहले से कम हो गया। STEAM सम्बंधी भारतीय प्रयासों में तेज़ी से गिरावट आ रही है। और यही स्थिति उच्च शिक्षा की भी है।

इसके लिए काफी हद तक शासन दोषी है हालांकि अमीर उद्योगों को भी निर्दोष नहीं माना जा सकता। युरोप, जापान या यूएस के विभिन्न निजी उद्योग और/या उद्योगपतियों की तरह यहां कोई ऐसा प्रतिष्ठान या संस्था नहीं हैं जो दूसरों के द्वारा किए गए शोध का समर्थन करे। वे तो केवल अपने अंदरुनी शोध और विकास को ही समर्थन देना बेहतर समझते हैं। इस प्रकार हम जैसे कई शोधकर्ताओं को केन्द्र और राज्य सरकार के समर्थन पर ही निर्भर रहना पड़ता है। राज्य सरकारें पैसे देने की बजाय ज़ुबानी समर्थन ही ज़्यादा देती हैं।

पुरानी सरकार की एक नहीं बल्कि दो विज्ञान सलाहकार पैनल थी और योजना आयोग में STEAM विशेषज्ञ सदस्य मौजूद थे। इन निकायों ने काफी बदलाव भी किया और एक्शन प्लान भी दिए। हम उम्मीद करते हैं कि वर्तमान सरकार इसी तरह की या इससे बेहतर सलाह व परामर्श लेगी, लेकिन ऐसा अभी तक हुआ नहीं है। वे अभी तक भविष्य के विज्ञान की खोजबीन करने की बजाय अतीत की (काल्पनिक व वास्तविक) उपलब्धियां गिना रहे हैं।

मंत्री घोषणा करते हैं कि वे ज़्यादा से ज़्यादा IIT, IIM, AIIMS और केंद्रीय विश्वविद्यालय, अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों में, स्थापित करेंगे। गौरतलब बात है कि ग्रामीण क्षेत्रों में समकक्ष सहकर्मियों से कोई सम्पर्क नहीं रहता जैसा कि शहरों में होता है। राजनेता इनमें से कुछ अभिजात्य संस्थाओं की सफलता से मुग्ध हैं और वे सोचते हैं कि इसी तरह संस्थाओं को सैकड़ों एकड़ ज़मीन आवंटित करके और करोड़ों रुपए का वायदा करके इस सफलता को कहीं भी तुरंत दोहरा सकते हैं। हालांकि हो सकता है कि यह पैसा अंततः दिया ही न जाए। और वैसे भी आईआईटी सिर्फ ईंट-गारे से नहीं बनते। आज पूरे देश में 30 से ज़्यादा ऐसे संस्थान कुकुरमुत्ते की तरह उग आएं हैं, और उनमें से ज़्यादातर मुखिया-विहीन हैं और किसी अन्य मौजूदा संस्थान के मुखिया से कहा जा रहा कि वे इन नवजात संस्थानों का नेतृत्व करें, मार्गदर्शन करें। यह तो दोतरफा हानिकारक तरीका है। वास्तव में इन संस्थानों की सफलता का राज़ यही है कि सही व्यक्ति को लिया जाए और उसे प्रयोग करने के लिए छोड़ दिया जाए। मगर इस तरह की स्वायत्तता तो शासकों को रास नहीं आती। विशेषज्ञ समिति बैठकर उस कार्य के लिए सही व्यक्ति का सुझाव दे देती है लेकिन मंत्री महोदय अपनी पसंद के व्यक्ति को रख लेते हैं। यह जिसकी लाठी उसकी भैंस का माकूल उदाहरण है। और हम चाहते हैं उत्कृष्टता!

जैसा कि प्रोफेसर अमर्त्य सेन ने हाल ही में सही ही कहा है, 'भारत में अकादमिक प्रशासन इस कदर सरकार की राय पर निर्भर करता है।' डेविड ब्राउन ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय को नहीं चलाते और न ही हार्वड को ओबामा

चलाते हैं। जानकार लोगों ने सफलता की तीन शर्तें बताई हैं - सम्बंधित क्षेत्र में विशेषज्ञता, निर्णय लेने की स्वतंत्रता और स्वायत्तता। मूल 5 आईआईटी और 5 केंद्रीय विश्वविद्यालयों ने इसी तरह शोहरत हासिल की थी। और इसी तरह इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस 100 से अधिक वर्षों से एक उत्कृष्ट संस्थान बना हुआ है। राजनीतिज्ञ कृपया इनसे दूर ही रहें।

यह तो और भी बुरा होगा कि आप अपने हिसाब से चीज़ों को चलाना चाहें और पैसा भी न दें। पिछले दो वर्षों में सरकारी शोध व विकास प्रयोगशालाओं के अनुदान में 35 प्रतिशत तक की कटौती की गई है। कुछ प्रयोगशालाओं ने अपने स्टाफ को वेतन देने के लिए आंतरिक फंड का इस्तेमाल किया। शोधकर्ता अपने शोध प्रोजेक्ट्स के लिए अनुदान स्वीकृति का पत्र लेकर घूम रहे हैं, लेकिन पैसा नहीं मिला है।

यह चमत्कार ही है कि इस सबके बावजूद कई वैज्ञानिक और शोधकर्ता अपने-अपने फील्ड में अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं। मैं कम-से-कम आधा दर्जन ऐसे युवाओं को जानता हूं जिनके हाल ही में विश्व स्तरीय शोध पत्र प्रकाशित हुए हैं।

वर्ग पहेली 128

हा	र	मो	न		प	क्षा	घा	त
द		ह			व			र
सा	व	न		म	न		श	ब
		जो		र		भि		त
स		द	क्षि	णा	य	न		र
खी		ड़ो		स		भि		
को	ख		सु	न्न		ना	भि	क
शि			पा			ह		पा
का	ला	हा	री		अ	ट	क	ल

लगभग सभी पेटेंट के काबिल हैं और आमदनी पैदा कर सकते हैं। यदि इनमें से कुछ को समय रहते (वास्तव में तत्काल) समर्थन दिया जाए, तो और काम करके स्वाइन फ्लू के लिए कारगर उपचार तैयार किया जा सकता है। उन्हें मदद और सहयोग की ज़रूरत है। यूएस में राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान (एनआईएच) के मॉडल के तहत इस तरह के शोध पत्रों को छांटा जाता है और शोधकर्ताओं को पेटेंट प्राप्त करने में मदद दी जाती है। हमारे यहां दो प्रतिभाशाली वैज्ञानिक डिपार्टमेंट ऑफ बायोटेक्नॉलॉजी और डिपार्टमेंट ऑफ साइंस एंड टेक्नॉलॉजी के प्रमुख हैं। मैं उनसे अनुरोध करता हूं कि वे संभावित सफलताओं का पता करने के पहलू पर गौर करें और लेखकों को पेटेंट प्राप्त करने में सहायता करें, जैसा कि चीन में किया जा रहा है (जिसकी बदौलत सार्स वायरस का इलाज खोजा गया है)।

स्वतंत्र भारत का निर्माण और विकास बड़े स्तर पर विज्ञान के साथ दोस्ती के आधार पर हुआ है। और ऐसा करने में देश ने कुछ ऐसे वैज्ञानिकों और अर्थशास्त्रियों की प्रतिभा और प्रतिबद्धता पर भरोसा किया जो बड़ी सोच रखते थे। सरकार उनके विचारों को आदर के साथ स्वीकार करती थी, उन पर अमल करती थी, बिना किसी बड़े हस्तक्षेप के। योजनाएं बनाई जाती थीं, बजट में पैसा रखा जाता था और खर्च किया जाता था, और हम उन्नति करते थे। यह प्रवृत्ति हमारे लिए लाभदायक रही, लेकिन हाल के समय में इसे चलता कर दिया गया है। विज्ञान अकादमियों ने सकारात्मक भूमिका निभाई है और आज भी निभा रही हैं। वे युवा शोधकर्ताओं को मार्गदर्शन देकर, शैक्षिक सलाह उपलब्ध करवाकर और सम्बंधित मंत्रालयों से चर्चा करके यह भूमिका निभाती हैं। हमें प्रवक्ताओं, यहां तक कि हिमायतियों की आवश्यकता है जिनके ज़रिए अकादमिक और पेशेवर समाज सरकार के साथ बातचीत और वकालत की भूमिका निभा सकें। इन सबकी अनुपस्थिति में STEAM के लिए बजट कम होता जाएगा। जेटली जी, विज्ञान से दोस्ती करें, वित्त मुहैया कराएं। मात्र 0.8 प्रतिशत जीडीपी से काम नहीं चलेगा। इसे 2 प्रतिशत बनाएं और भारत में ही बनाएं। तभी तो अच्छे दिन आएंगे। ***(स्रोत फीचर्स)***